ग्राफ़िक डिज़ाइ

सूची

स्वदेशी ग्राफ़िक डिज़ाइन और संस्कृति
ग्राफ़िक डिज़ाइन की स्वदेशी परंपराएँ

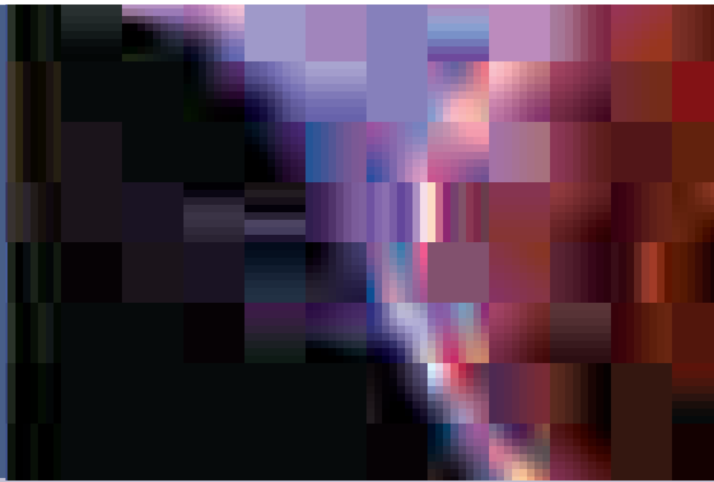

इकाई II

ग्राफ़िक डिज़ाइन और समाज

भारत में अतिप्राचीन काल से ही, विश्व के साथ मानव के संबंधों को अभिव्यक्त करने और उसके संबंध में अपने आंतरिक भावों एवं विचारों को प्रकट करने के लिए संकेतों के रूप में एक अत्यंत सरल एवं अर्थपूर्ण भाषा का प्रयोग किया जाता रहा है। इस प्रकार की भावाभिव्यक्ति में सक्षम इन विभिन्न डिज़ाइनों, संकेतों की क्षमता को ऐसे विभिन्न प्रतीकों में देखा जा सकता है जो हमारी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में ही नहीं बल्कि राजनीतिक, धार्मिक और सामान्य गतिविधियों में भी देखने को मिलते हैं। ये प्रतीक **रंगोली, कोलम, अल्पना, मेंहदी** या अन्य किसी भी रूप में हो सकते हैं और इनकी जड़ें निश्चित रूप से हमारे समाज में गहराई तक फैली हुई हैं।

4

अध्याय

स्वदेशी ग्राफ़िक डिज़ाइन और संस्कृति

'स्वदेशी' (indigenous) शब्द का सामान्य अर्थ है 'किसी खास क्षेत्र या पर्यावरण अथवा परिवेश में उत्पन्न हुआ या उत्पन्न किया जा रहा'। इसलिए इस अर्थ में किसी भी जातीय (ethnic) समूह या समुदाय और उनकी कलात्मक तथा सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों एवं पद्धतियों को किसी क्षेत्र या स्थान विशेष के संदर्भ में स्वदेशी (देशी) कहा जा सकता है।

भारतीय संदर्भ में 'डिज़ाइन' का अर्थ देने वाले शब्दों का प्रयोग सर्वप्रथम वैदिक साहित्य में किया गया है। वैदिक सूक्तों में सर्वदा यह माना गया है कि संपूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना एक पूर्व-निर्धारित योजना के अनुसार की गई है। ऋग्वेद के दसवें मंडल (अध्याय) में 'अघमर्षणम्' नामक एक सूक्त है। इस सूक्त का विषय सृष्टि की रचना है जिसमें यह बताया गया है कि विश्व की रचना किस क्रमिक प्रक्रिया के अंतर्गत हुई। सूक्त में कहा गया है कि विश्व की रचना पूर्व-निर्धारित योजना के अनुसार ही की गई थी। इस सूक्त में डिज़ाइन की प्रक्रिया को व्यक्त करने के लिए 'कल्प' शब्द का प्रयोग किया गया है। 'कल्प' संस्कृत भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है कल्पना-प्रसूत रचना या योजना। इसी प्रकार ब्रह्मसूत्र (एक दर्शनशास्त्रीय ग्रंथ जो वैदिक ज्ञान का सार प्रस्तुत करता है) के दूसरे अध्याय में यह कहा गया है कि विश्व की रचना भी एक पूर्व-निर्धारित रूप है। इस संदर्भ में ब्रह्मसूत्र में 'रचना' शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ है कि विश्व की भी एक डिज़ाइन, संयोजन या संरचना है। इसके अलावा ब्रह्मसूत्र के अध्याय 221 में यह भी कहा गया है कि चूँकि विश्व एक पूर्व-निर्धारित योजना यानी डिज़ाइन के अनुसार ही बना है, इसलिए डिज़ाइन का बनाने वाला भी कोई होना चाहिए। इस प्रकार यह संकेत दिया गया है कि इस विश्व यानी डिज़ाइन का कोई डिज़ाइनर भी होना चाहिए, अर्थात् सृष्टि का कोई सृष्टिकर्ता भी अवश्य है। अत: यह कहा जा सकता है कि 'कल्प' और 'रचना' दो ऐसे शब्द हैं जिनसे डिज़ाइन या कल्पना-प्रसूत रचना अथवा संगठित ढाँचा बनाने की गतिविधि का बोध होता है। डिज़ाइन की वैदिक संकल्पना के अतिरिक्त, हमें आगे चलकर ललित कलाओं तथा वास्तुकला, स्थापत्यकला विषयक अनेक ग्रंथों में और अन्य श्रेण्य या प्राचीन साहित्य में भी डिज़ाइन तथा

चित्र 4.1 विशेष प्रकार की जनजातीय पगड़ी और चित्रित चेहरा जनजातीय व्यक्ति की पहचान तथा प्रतिष्ठा का सूचक है

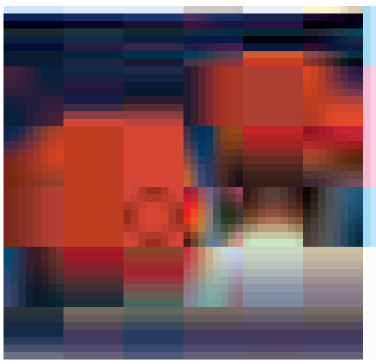

चित्र 4.2 पगड़ी क्षेत्र-विशेष के पहनावे की सूचक होती है

चित्र 4.3 मेंहदी की डिज़ाइन

तत्संबंधी कलात्मक गतिविधियों पर चर्चा मिलती है। इन ग्रंथों में कलात्मक और स्थापत्य संबंधी डिज़ाइन की पद्धतियों के बारे में नियमों तथा विधियों आदि का विधान किया गया है। ये डिज़ाइन के सैद्धांतिक आधार होते हैं, जिनका कलाकार को पालन करना होता है। भारत में डिज़ाइन बनाना अनेक समुदायों के पेशे का अभिन्न अंग होता है। जो समुदाय कला या शिल्प की चीज़ें, लकड़ी का काम, जेवर-गहने, धातु, पत्थर, मिट्टी के बर्तन, कपड़े, खिलौने, चित्र, स्थापत्य आदि बनाने का पेशा करते थे, उनमें परंपरागत रूप से डिज़ाइन तैयार करने की कुशलता होती थी और वह पीढ़ी-दर-पीढ़ी विरासत में मिलती रहती थी।

स्वदेशी डिज़ाइन की पद्धतियाँ ज्ञान-विज्ञान या जिज्ञासा के विस्तृत क्षेत्र से जुड़ी हैं। यह क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है और इसमें विभिन्न प्रकार की कार्यात्मक, धार्मिक, सामाजिक तथा संचार संबंधी गतिविधियों से संबंधित जटिल साज-सज्जाओं और अलंकरणों से लेकर विभिन्न प्रकार के धार्मिक प्रतीक-यंत्र, भित्ति-चित्र, स्त्रियों द्वारा फर्श पर बनाई जाने वाली अल्पना व कोलम, शरीर पर गोदवाये जाने वाले टैटू (गोदना), हाथों-पैरों पर रचाई जाने वाली मेंहदी और सिर पर पहनी जाने वाली विभिन्न प्रकार की पगड़ियों आदि से संबंधित डिज़ाइन शामिल हैं। इन अभिव्यक्तियों का उपयोग रूपात्मक विशेषताओं के साथ, विभिन्न प्रकार की धार्मिक तथा धर्मनिरपेक्ष आवश्यकताओं के अनुसार किसी विशेष संदर्भ या परिवेश में किया जाता है।

भारत जैसे देश में जहाँ विभिन्न प्रकार की सामाजिक-सांस्कृतिक परंपराएँ और रूढ़ियाँ एवं रीति-रिवाज प्रचलित हैं, डिज़ाइन के रूप स्थान और जातीय समूहों की विशेषताओं के अनुसार बदलते रहते हैं। इस प्रकार भिन्न-भिन्न वर्गों की वेश-भूषा, रहन-सहन तथा रीति-रिवाज भिन्न-भिन्न और अपनी विशिष्टता लिए हुए होते हैं। जैसा कि स्पष्ट है, स्वदेशी डिज़ाइन की पद्धतियाँ भी भिन्न-भिन्न कार्य रूपों, जैसे धार्मिक और सामाजिक रीति-रिवाजों में भिन्न-भिन्न किस्म की होती हैं। ऐसा होना स्वाभाविक भीह ै क्योंकित त्संबंधीध ार्मिकत थाध र्मनिरपेक्षउ पयोगिताक ेआ वश्यकताएँभ ी भिन्न-भिन्न होती हैं। उदाहरण के लिए, राजस्थान में पगड़ी पहनने की शैली हर 15 किलोमीटर पर बदलती रहती है।

इस प्रकार, सामाजिक और धार्मिक जीवन ने भारत में विभिन्न क्षेत्रों के डिज़ाइन रूपों को प्रभावित किया है। इन डिज़ाइन रूपों का कई तरह से वर्गीकरण किया जा सकता है। इनमें से वर्गीकरण का एक तरीका है कर्मकांडीय और उपयोगितावादी।

कर्मकांडीय

गोदना (tatoo) और मेंहदी की डिज़ाइनें कर्मकांडीय स्वदेशी ग्राफिक डिज़ाइनों के सर्वोत्तम उदाहरण हैं जो प्राचीन काल से आज तक चली आ रही हैं। ये डिज़ाइनें कुछ विश्वासों तथा धार्मिक पद्धतियों के साथ जुड़ी हुई सामाजिक क्रियाओं में प्रयुक्त होती हैं। स्वदेशी डिज़ाइनें सतही अलंकरण तथा सजावटी तरीके, जैसे कि दीवारों या वस्तुओं पर अंकित किए जाने वाले रेखाचित्रों के रूप में भी पाई जाती हैं। आभूषणों और पगड़ियों आदि के विभिन्न रूप भी इसी श्रेणी में आते हैं। हम प्राय: देखते हैं कि लड़कियाँ शादी-विवाह और तीज-त्योहारों के

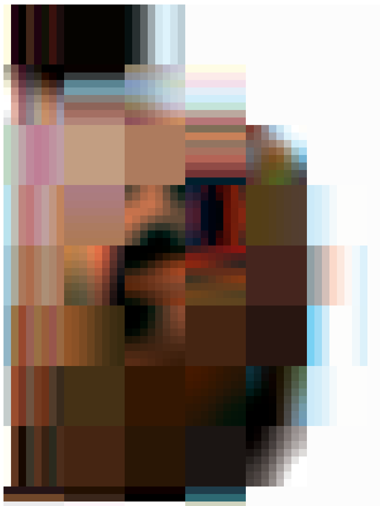

चित्र 4.4 शरीर को सजाने वाला गोदना (टैटू)

टैटू शरीर पर बनाया जाने वाला एक स्थायी निशान या छाप होता है। कई बार ऐसा भी होता है कि टैटू वाला व्यक्ति अपने शरीर से उस टैटू के निशान को मिटाना चाहता है लेकिन उसे हटाने की प्रक्रिया बहुत मंहगी और तकलीफदेह होती है। कुछ मामलों में तो हटाने की कोशिश किए जाने के बाद भी टैटू पूरी तरह नहीं हटते, उनका कुछ अंश शेष रह जाता है या उनका धब्बा स्थायी रूप से बना रहता है।

चित्र 4.5 दीपक रखने के लिए दीवार में बना हुआ आला या दीपघर

अवसरों पर मेंहदी से अपने हाथ–पैरों को सजाती हैं। यह केवल सजावट के लिए ही नहीं लगाई जाती बल्कि इसके कई सौंदर्यशास्त्रीय उद्देश्य भी होते हैं।

मेंहदी शारीरिक कला का एक अल्पकालीन या अस्थायी रूप है जो एक पौधे की पत्तियों को पीसकर या उनके पाउडर को पानी में मिलाकर तैयार किए गए गाढ़े घोल (paste) से बनाया जाता है। यह पौधा ज्यादातर मध्य एशिया क्षेत्र और एशिया–प्रशांतमहासागरीय क्षेत्रों में पाया जाता है जहाँ का मौसम गर्म और सूखा होता है। मेंहदी के पौधे की पत्तियों को सुखाकर और बारीक पीसकर पाउडर जैसा बना लिया जाता है। फिर उस पाउडर में उचित मात्रा में पानी, यूकलिप्टस का तेल, चाय, काफी और चूना मिलाकर मिश्रण बनाया जाता है और फिर उस पेस्ट से हाथ–पैरों पर तरह–तरह के सुन्दर डिज़ाइन बनाए जाते हैं। कुछ ही समय बाद जब मेंहदी रच जाती है तो उसे पानी से धोकर उतार दिया जाता है। मेंहदी उसके औषधीय गुणों के कारण भी परंपरागत रूप से इस्तेमाल की जाती रही है। भारत में इसका प्रयोग इसलिए लोकप्रिय हुआ क्योंकि यहाँ की तपती हुई गर्मी में इसका लेप ठंडक पहुँचाता था। भारत में आज भी धार्मिक रीति–रिवाजों और उत्सवों पर मेंहदी लगाई जाती है। मुख्य रूप से स्त्रियाँ ही मेंहदी रचाती हैं। मेंहदी डिज़ाइन की सुंदर टेढ़ी–मेढ़ी रेखाएँ तथा बेल–बूटे इसके स्त्रियोचित स्वरूप का प्रमाण हैं।

मेंहदी के अलावा, शरीर को सजाने के कुछ अधिक स्थायी रूप पच्चाकोट्टू गोदना, ऊलकी आदि प्रचलित हैं। इन्हें आप टैटू कह सकते हैं जिसका अर्थ है कि नुकीली चीज़ से अंकित करना। प्रारंभ में टैटू डिज़ाइनों का इस्तेमाल अलग–अलग जनजातियों की पहचान के लिए किया जाता था। कुछ समुदाय अपनी प्रतिष्ठा के प्रतीक के रूप में भी इसका प्रयोग करते थे। एक स्थायी जनजातीय पहचान के रूप में इसका प्रयोग किए जाने के अलावा यह शरीर सजाने के लिए भी काम में लाया जाता था, हालांकि यह अत्यंत कष्टदायक प्रक्रिया थी। इस क्रिया को बड़ी सावधानी से संपन्न किया जाता था क्योंकि अगर किसीo यक्तिव ेश ारीरप रग लतट ैटूग ोर्द दयाग यात ेउ सेअ पनेस ेि भन्न जनजाति का समझा जाने का खतरा हो जाता था और उसे स्थायी रूप से बाहरी व्यक्ति भी माना जा सकता था।

टैटू डिज़ाइन बनाने की प्रक्रिया में एक तीखे दाँतों वाले कंघे को काजल की काली स्याही में डुबोया जाता है और फिर उसके दाँतों को चमड़ी में चुभोया जाता है। इससे तकलीफ तो होती है फिर भी बहुत लोग अपने शरीर, खास तौर से अपनी बाँहों पर गोदवाते हैं। जनजातीय टैटू डिज़ाइनों का आधार जनजातीय कला होती है जो स्थानीय और स्वदेशी जातियों द्वारा व्यवहार में लाई जाती है। ऐसा माना जाता है कि इन गोदनों या टैटुओं को लगाने से उर्वरता, जननक्षमता और सुंदरता बढ़ती है, साथ ही उनका जादुई असर भी होता है। इसके अलावा, वे व्यक्ति के सामाजिक स्तर और उसकी जनजातीय पहचान में भी सहायक होते हैं।

उपयोगितावादी

सामाजिकर ीति–रिवाजोंव ेअ नुसारस् वदेशीि डाइ़ाइनोंव ेरू पउ नकेउ द्देश्यों, बनाने के तरीकों और भौतिक मूल्यों पर निर्भर करते हैं। विभिन्न वस्तुओं की

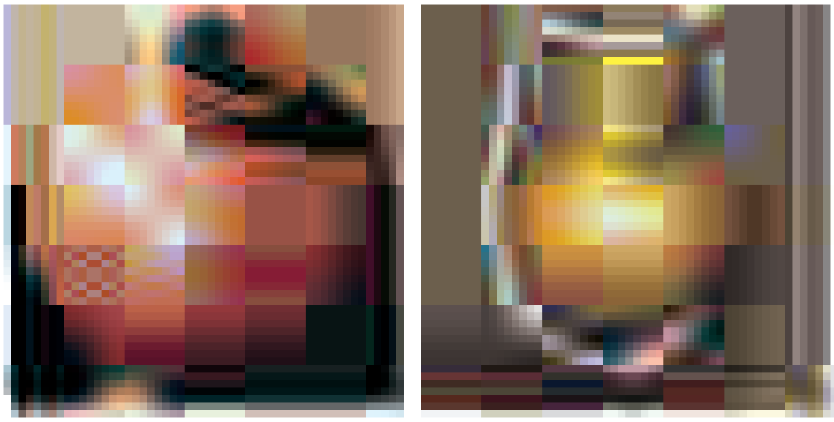

चित्र 4.6 घड़ा और कलशी

डिज़ाइन के पीछे जो भाव या अभिप्राय निहित होता है वही उनके रूप, व आकार–प्रकार आदि का निर्णय करता है और इसी विशिष्ट प्रयोजन के अनुसार उन डिज़ाइनों में आवश्यक परिवर्तन और समायोजन किया जाता है। उदाहरण के लिए, बर्तनों के आकार–प्रकार और रूप–रंग में उनके उपयोगिता तथा स्थान–विशेषव ेअ नुसारक ाफीअ ंतरप ायाज ाताह ै।प ात्रोंव ेरू पअ ैरन ाम उनके इस्तेमाल के अनुसार अनेक होते हैं, जैसे, हाँडी यानी पकाने का बर्तन, कलशी यानी पानी लाने या भरने का छोटा घड़ा आदि। कुछ पात्र काफी बड़े होते हैं; जैसे – बड़े घड़े, मांट या कुंडियाँ, जिनमें छोटे घड़ों से लाकर पानी इकट्ठा किया जाता है, उनका मुँह चौड़ा होता है ताकि उनमें से आवश्यकतानुसार पानी दूसरे बर्तनों की सहायता से निकाला जा सके। घड़े सरंध्र बालूदार चिकनी मिट्टी से बनाए जाते हैं जिससे वाष्पीकरण की प्रक्रिया से पानी ठंडा रहता है।

सिर पर, कमर के सहारे और हाथों से उठाकर ले जाने वाले बर्तनों के रूप अलग–अलग होते हैं। इसी प्रकार चावल, तेल, दूध जैसी चीज़ें रखे जाने वाले पात्र भी विशेष आकार–प्रकार के होते हैं। सामान भरकर रखे जाने वाले भिन्न–भिन्न किस्मों के संग्रहण पात्रों के स्थानीय नाम और रूप अलग–अलग होते हैं, कुछ चपटे, कुछ चौड़े या लंबे होते हैं। किसी की गर्दन मोटी या सँकरी होती है। यह सब इस बात पर निर्भर करता है कि वे किस काम में लिए जाते हैं।

भिन्न–भिन्न आकारों और रूपों के बड़े–बड़े नाँदों में डालकर घरेलू पशुओं या अन्य जानवरों को चारा खिलाया जाता है। और बड़े आकार के गोल पेंदे वाले कटोरों या कड़ाहों में धान को डालकर सेला या उसना चावल बनाया जाता है।

विभिन्न प्रकार की धार्मिक क्रियाओं में काम आने वाले पात्रों का आकार–प्रकार और रूप–रंग भी उन क्रियाओं की आवश्यकताओं के अनुसार ही निर्धारित होता है।

किसी धार्मिक स्थल या मंदिर–मठ आदि के वास्तु–रूप का डिज़ाइन तत्संबंधी धर्म–विशेष का द्योतक होता है। उनका वास्तुगत परिवेश पूजा–अर्चना के लिए उपयुक्त होता है। उदाहरण के लिए, मठ–मंदिरों के ऊँचे शिखरबंद और गर्भगृह तक पहुँचाने वाली लंबी–ऊँची सीढ़ियाँ तथा आँगन आदि उनके

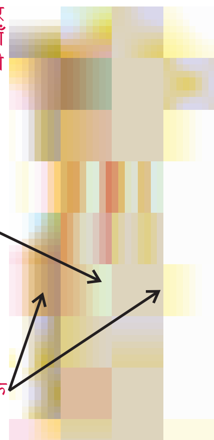

आगे-पीछे स्थित चार शेरों की आकृतियाँ चार (दिशाओं) की द्योतक हैं।

उनके नीचे चित्रित पहिया धर्मचक्र यानी कानून के पहिए का प्रतीक है।

पहिए के साथ दिए गए चार पशु बुद्ध के धर्मोपदेश की व्यापकता तथा विस्तार के सूचक हैं। घोड़ा दक्षिण दिशा का प्रतीक है।

साँड़/बैल पश्चिम का प्रतीक है।

हाथी पूर्व का और शेर उत्तर का प्रतीक है।

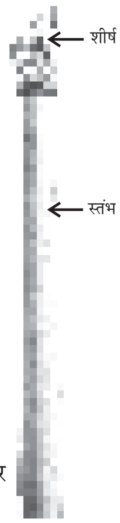

चित्र 4.7 सिंह-शीर्ष और स्तम्भ

चित्र 4.8 लहँगा

धार्मिक महत्व, दूरी, उत्कृष्टता व सम्मान के सूचक होते हैं।

आइए,अ बह मउ सप्र तीकप र ि वचारक रेंज ोह मेंअ क्सरह मारेन ोटों, सिक्कों, सरकारी संस्थाओं, रक्षा संगठनों के नामपट्टों, डाकटिकटों तथा राष्ट्रपति भवन के शिखर जैसे स्थानों पर देखने को मिलता है।

इन सभी स्थानों में क्या पाया जाता है? यह सिंह-शीर्ष (lion capital) है।

सिंह-शीर्ष सम्राट अशोक द्वारा सारनाथ में बुद्ध के प्रथम धर्मोपदेश की स्मृति में बनाया गया था, इसे अब स्वतंत्र भारत के प्रतीक के रूप में अपनाया गया है। राजाज्ञा स्तंभ कहे जाने वाले ये शीर्ष स्तंभ प्रारंभ में एक लंबे स्तंभ यानी खंभे के सिर पर रखे जाते थे और ये स्तंभ ऐसे धार्मिक स्थलों पर स्थापित किए जाते थे जो बुद्ध के जीवन की घटनाओं से जुड़े होने के कारण तीर्थस्थल माने जाते थे। और ये स्तंभ तीर्थयात्रियों के लिए मार्गदर्शक का काम करते थे। क्या ये स्तंभ आजकल के बड़े विज्ञापनपट्टों (होर्डिंग) के समान नहीं होते? ये स्तंभ और होर्डिंग, दोनों ही विज्ञापन या प्रचार का काम करते हैं – एक धर्म का प्रचार करता है तो दूसरा किसी व्यापारिक वस्तु का। दोनों को आँख के स्तर से ऊँचा प्रदर्शित किया जाता है और अधिकतम ध्यानाकर्षण के लिए उन्हें किसी महत्वपूर्ण या ऊँचे स्थान पर रखा जाता है। इनका यात्रियों तथा दर्शकों पर काफी प्रभाव पड़ता है और वे उसकी ओर आकर्षित होते चले जाते हैं।

यह स्तम्भ बौद्ध धर्म के पहले से प्रचलित अक्ष शीर्ष (मुंडी) की एक अतिप्राचीन परंपरा की पराकाष्ठा का द्योतक है। अक्षमुंडी एक ऐसे बिंदु का प्रतीक है जो आकाश और पृथ्वी को आपस में जोड़ता है। यह स्तंभ पृथ्वी और आकाश के बीच यात्रा या संवाद स्थापित करने का माध्यम बनता है। अक्षमुंडी सभी संस्कृतियों में विभिन्न रूपों में पायी जाती है।

स्वदेशी डिज़ाइनों के कर्मकांडीय और उपयोगितावादी वर्गीकरण पर ऊपर इसलिए चर्चा की गई है ताकि स्वदेशी डिज़ाइनों को अधिक अच्छी तरह समझा जा सके। लेकिन हम आमतौर पर यह पाते हैं कि डिज़ाइनों को एक से अधिक श्रेणी के अंतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है। स्वदेशी डिज़ाइन को समझने के लिए पाठक को इन पर कई परिप्रेक्ष्यों से दृष्टिपात करना होगा। स्वदेशी डिज़ाइन हमेशा कोई खास अर्थ रखती है। इनका रूप भी आकर्षक एवं सौंदर्यपरक होता है जो किसी डिज़ाइन का अभिन्न एवं महत्वपूर्ण पहलू होता है। अंतिम बात यह है कि डिज़ाइन किसी आवश्यकता से ही उत्पन्न होती है और उसका एक विशिष्ट कार्य या प्रयोजन होता है जो उसे पूरा करना होता है। इसलिए, स्वदेशी डिज़ाइन को निम्नलिखित से समझा जा सकता है।

संदर्भगत परिप्रेक्ष्य

वस्तुएँ विभिन्न संदर्भों में अपना अर्थ, महत्व या उपयोगिता संबंधी मूल्य बदल लेती हैं। कपड़े का एक आयताकार टुकड़ा शरीर के अलग-अलग भागों पर भिन्न-भिन्न तरीकों से बाँधा या लपेटा जा सकता है। और वह अपनी स्थिति के अनुसार कपड़े की अलग-अलग चीज़ें बन जाता है। जब इसे सिर के चारों ओर

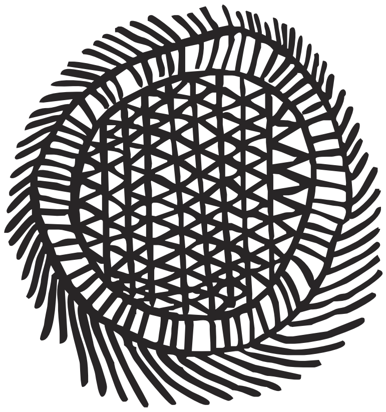

चित्र 4.9 प्रतीकात्मक सूर्य

लपेटा जाता है तो यह पगड़ी का काम देता है। जब वह शरीर के ऊपरी भाग पर लपेटा जाता है तो वह शॉल या उत्तरीय बन जाता है और जब उसे कमर के चारों ओर लपेटकर शरीर के नीचे के भाग को ढका जाता है तो यह अंतरीय, अधोवस्त्र, कच्छा या लहँगा बन जाता है।

सांकेतिक परिप्रेक्ष्य

भारत में अति प्राचीन काल से ही विश्व के साथ मानव के संबंधों को अभिव्यक्त करने और उसके संबंध में अपने आंतरिक भावों एवं विचारों को प्रकट करने के लिए संकेतों के रूप में एक अत्यंत सरल एवं अर्थपूर्ण भाषा का प्रयोग किया जाता रहा है। इस प्रकार डिज़ाइनें किसी न किसी रूप में अर्थपूर्ण बन जाती हैं। डिज़ाइनों का सांकेतिक परिप्रेक्ष्य उनके प्रयोगकर्ताओं में एक समझ पैदा करता है जिससे स्वदेशी डिज़ाइनों के पारस्परिक संबंधों का पता चलता है। चूँकि ग्राफिक प्रतीक देखने में आकर्षक और प्रभावी होते हैं इसलिए इनके संबंध में विचारणीय विषय और महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

दूसरी ओर, भावों या प्रतीकों को आत्मसात् करने की जो क्षमता होती है वह भी उनके कार्य का एक अन्य पहलू होता है। संकेतों की इस क्षमता को विभिन्न प्रतीकों में देखा जा सकता है जो हमारी रोजमर्रा की ज़िंदगी में ही नहीं बल्कि राजनीतिक, धार्मिक, सामान्य गतिविधियों में भी देखने को मिलती है। डिज़ाइनों की यह क्षमता देखने वालों को अपनी ओर आकर्षित और प्रभावित करती है।

देवी-देवताओं को चित्रित करने वाले प्रतीकात्मक डिज़ाइन को अंगदेव के अद्भुत रूप में भी देखा जा सकता है। अंगदेव बस्तर (छत्तीसगढ़) की मुड़िया जनजाति के इष्ट देव हैं। इसका एक निश्चित रूप होता है जो दो लट्ठों को दो

चित्र 4.10 अंगदेव

आड़ी बल्लियों के साथ बाँधकर तैयार किया जाता है; उसके जोड़ों पर मोर पंख लगाए जाते हैं।

लट्ठों की ऊपरी सतह पर दोनों ओर सिक्के चिपकाए जाते हैं। भक्त लोग अंगदेव को अपने कंधों पर उठाकर ले जाते हैं। बीच का खंबा स्वयं अंगदेव का प्रतीक होता है। अंगदेव हलके काले रंग से रँगा होता है जिससे उसकी उपस्थिति में प्रबलता का आभास होता है। जब भक्त लोग उसे कंधे पर उठाकर तेज़ी से चलते हैं तो उनकी प्रशंसा और गुणगान करते हैं ।

कार्यात्मक परिप्रेक्ष्य

कार्य के अनुसार ही रूपांकन किया जाता है, यह बतलाने के लिए साँची स्तूप से एक उदाहरण लें। यक्षी की आकृतियों वाला टोड़ा (ब्रैकेट) एक वास्तुकलात्मक डिज़ाइन है। टोड़े में दिखाया गया है कि यक्षियाँ सरदल (lintel) के बोझ को उठाए हुए हैं। उनके शरीर की मुद्रा से बोझ के भारीपन का एहसास होता है। बोझ के कारण उनके पाँव भी मुड़े हुए दिखाए गए हैं।

चित्र 4.11 यक्षी

आप जानते हैं कि शहरों में जगह की कमी होती है। वहाँ कम से कम जगह का अधिक से अधिक उपयोग कैसे किया जाता है, आइए यह देखें। छोटी-छोटी दुकानों या सड़क के किनारे बनी हुई छोटी-छोटी दुकानों जैसे चाय की गुमटी को ऊपर-नीचे कई तल्लों में बाँट लिया जाता है। ऊपरी तल्ला रोज़मर्रा की लेन-देन या कारोबार के लिए होता है जबकि नीचे का हिस्सा काम करने या सामान रखने के लिए काम में लिया जाता है। इस प्रकार कार्य की दृष्टि से जगह की व्यवस्था किए जाने का अनुभव दृश्य स्थान तथा ग्राफिक संवेदनग्राहिता के हमारे भाव को पुष्ट करने में योगदान देता है।

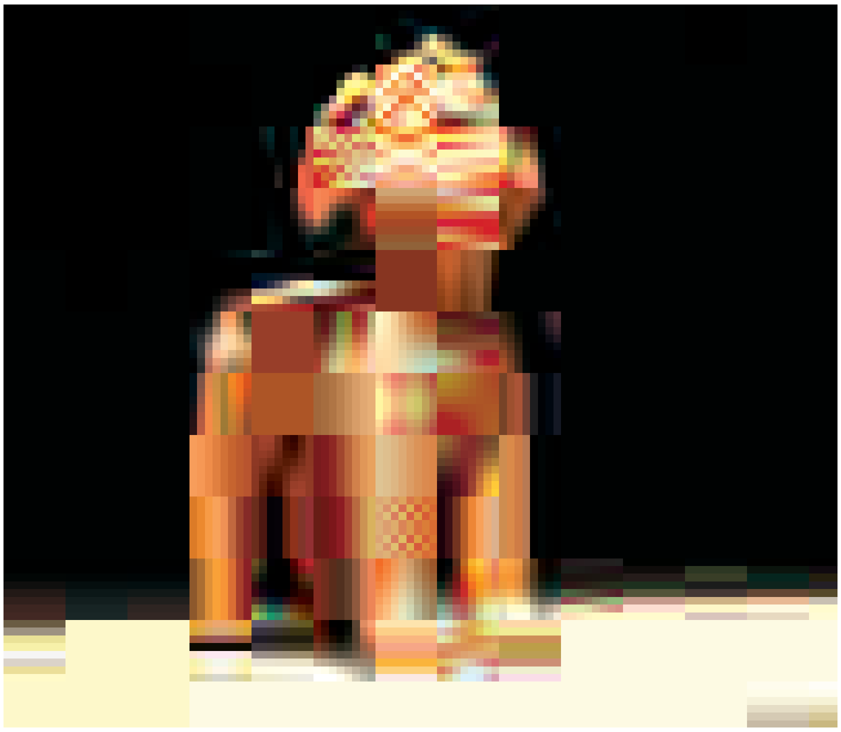

चित्र 4.12 धार्मिक कर्मकांड में उपयोग करने के लिए बनाई गई मिट्टी की मूर्ति (ईडर, गुजरात से प्राप्त)

चित्र 4.13 कर्मकांड में बनाए जाने वाले कुछ स्थानीय प्रतीक

सांस्कृतिक तथा सामाजिक रूपों का महत्त्व

हमारा सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन विभिन्न प्रकार के रूपों के सृजन करता है जिनका अपना महत्व होता जैसे–

- पगड़ी किसी वर्ग, जाति, पेशा या धार्मिक पहचान की सूचक होती है।
- मंगलसूत्र स्त्री के विवाहित होने की पुष्टि करता है।
- स्वास्तिक धार्मिक चिह्न का द्योतक होता है; त्रिभुज और उलटे त्रिभुज जैसे ज्यामितीय आरेख जिन्हें यंत्रों या दीवारों की सजावटों में देखा जाता है, नारी और पुरुष की सृजन संबंधी शक्ति या क्षमता के सूचक होते हैं। इसी प्रकार मंडल की आकृतियाँ संपूर्ण ब्रह्मांड का सूक्ष्म रूप दर्शाती हैं।
- अपने शहीदों या मृतकों की याद में जनजातीय समुदायों द्वारा निर्मित स्मारक स्तंभ (जैसे, भीलों द्वारा वीर पुरुषों के लिए बनाए जाने वाले गाथा और स्त्रियों के लिए बनाए जाने वाले सती स्तंभ; ऐसे ही स्मारक स्तंभ कोरकु जनजातियों द्वारा भी बनाए जाते हैं जिन्हें शिडोली मुण्डा कहते हैं, इसी प्रकार माड़िया जनजाति के स्मारक स्तंभ पेड़ के संपूर्ण तने को उकेर कर बनाए जाते हैं)।
- विवाह स्तंभ जिन्हें मंगरोही खंभ कहा जाता है, गोंड जनजाति के लोगों द्वारा बनाए जाते हैं। ये स्तंभ जननक्षमता के प्रतीक होने के साथ-साथ बुरी नज़र को भी दूर भगाने वाले समझे जाते हैं। गोंड लोग अपनी धार्मिक क्रिया संपन्न करने के बाद इन स्तंभों को नदी में बहा देते हैं।

चित्र 4.14 बस्तर से प्राप्त मिट्टी का हाथी जो मनौती पूरी होने पर पूजा जाता है।

- बुरी नज़र से बचने के लिए झाड़ू और चप्पलों को बाँस के लंबे लट्ठे में बाँधकर, भवनों के निर्माण स्थलों पर लगाया जाता है।
- मनौती पूरी होने पर चढ़ाई जाने वाली आकृतियाँ; जैसे – मिट्टी के बने घोड़े, बैल, हाथी और ऊँट।
- पेड़ों के नीचे स्थापित पत्थरों के रूप में देवी-देवता, ध्वजदंड, त्रिशूल, लट्ठे के ऊपर लगाए गए मोर पंख (गोंड लोगों द्वारा चंडी) या, नदीतल से निकाले गए चिकने गोलाकार पत्थर जो एक-दूसरे पर स्थापित किए जाते हैं, शिव का प्रतीक माने जाते हैं।

प्रश्नावली

1. 'स्वदेशी डिज़ाइन' शब्द से आप क्या समझते हैं? कुछ उदाहरण देते हुए स्पष्ट करें।
2. शारीरिक डिज़ाइन शब्द से आप क्या समझते हैं? मेंहदी के डिज़ाइन और शरीर पर गोदे गए टैटू में क्या अंतर होता है?
3. स्मारकस् तंभश ाब्दस `अ ापक यास मझतेह ैं?व ुछउ दाहरणद `कर स्पष्ट करें।
4. राजाज्ञा स्तंभ क्या होते हैं? आप 'अक्ष मुंडी' शब्द से क्या समझते हैं?
5. प्रतीकों की रचना में संस्कृति की भूमिका पर संक्षेप में चर्चा करें। उदाहरणों के साथ अपने उत्तर को स्पष्ट करें।
6. समाज और वस्तुएँ अपनी धार्मिक क्रिया और उपयोगिता से जुड़े होते हैं, इस कथन को स्पष्ट करें।

प्रायोगिक

1. पाँच परंपरागत या समकालीन रूपों/वस्तुओं के रोज़मर्रा के उपयोगों का पता लगाएँ और उनके कार्यों का चित्रात्मक विश्लेषण करें।
2. अपने आसपास के परिवेश से कुछ (तीन से पाँच) डिज़ाइनें इकट्ठी करें और उन्हें अधिक प्रभावी तथा सौंदर्यशास्त्रीय दृष्टि से आकर्षक बनाने के लिए उनके रूप में कुछ परिवर्तन करें।
3. किसी नमूने का डिज़ाइन तैयार करें और उसे त्रिआयामी रेखाचित्र में बदलें।